जैन-आचार्यों का संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान

डा० अमरनाथ पाण्डेय

संस्कृत-साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में जैनों का योगदान रहा है। काव्यशास्त्र के क्षेत्र में भी उनकी सेवा महनीय है। ऐसे अनेक आचार्य हुए हैं, जिन्होंने काव्यशास्त्र के सिद्धान्तों की सूक्ष्म परीक्षा की है और अनेक उद्भावनायें प्रस्तुत की हैं। यहाँ संक्षेप में इन आचार्यों के योगदान की चर्चा की जा रही है।

हेमचन्द्र[1] ऐसे जैन-आचार्य हैं, जिन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इन्होंने अपनी सेवा और साधना से विद्वत्परम्परा की सर्जना की। इनका जन्म 1090 ई. में गुजरात प्रान्त के धुन्धुका ग्राम में वैश्य वंश में हुआ था। इनके पिता का नाम चचिभ और माता का नाम चाहिणी या पाहिणी था। दीक्षित होने के पहले इनका नाम चङ्गदेव था। इन्होंने आठ वर्ष की अवस्था में देवचन्द्रसूरि से जैन-धर्म की दीक्षा ग्रहण की। इक्कीस वर्ष की अवस्था में 'सूरि' पद प्राप्त होने पर ये 'हेमचन्द्र' नाम से प्रसिद्ध हुए।

जयसिंह सिद्धराज (1093-1143 ई.) और कुमारपाल (1143-1173 ई.) से आचार्य हेमचन्द्र को अत्यधिक सम्मान मिला था। हेमचन्द्र के अनेक योग्य शिष्य थे, जिनमें रामचन्द्र, गुणचन्द्र, वर्धमानगणि, महेन्द्रसूरि, देवचन्द्रमुनि, यशश्चन्द्रगणि आदि थे। हेमचन्द्र ने व्याकरण, साहित्य, दर्शन आदि के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इनका काव्यशास्त्र विषयक ग्रन्थ 'काव्यानुशासन' अत्यधिक प्रसिद्ध है। इस पर लेखक की अपनी टीका है। इस ग्रन्थ के तीन भाग हैं—सूत्र (गद्य), वृत्ति और उदाहरण। सूत्रभाग का नाम काव्यानुशासन, वृत्तिभाग का नाम अलङ्कारचूडामणि

1. हेमचन्द्र के जीवन के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान के लिए द्रष्टव्य—प्रभाचन्द्र विरचित प्रभावकचरित, मेरुतुङ्गसूरि विरचित प्रबन्धचिन्तामणि, राजशेखरसूरि विरचित प्रबन्धकोष, सोमप्रभसूरि विरचित कुमारपालप्रतिबोध, बूलर—कृत 'लाइफ ऑफ हेमचन्द्र' आदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा उदाहरणभाग का नाम विवेक है। इसमें आठ अध्याय हैं। प्रथम में काव्य के उद्देश्य, हेतु आदि, द्वितीय में रस, तृतीय में दोष, चतुर्थ में गुण, पञ्चम में शब्दालङ्कार, षष्ठ में अर्थालङ्कार, सप्तम में नायक-नायिका के गुण और प्रकार तथा अष्टम में दृश्य और श्रव्य काव्य के भेदोपभेदों तथा लक्षणों का निरूपण हुआ है।

काव्यानुशासन के अतिरिक्त इनके ग्रन्थ सिद्धहेमशब्दानुशासन, वादानुशासन, धातुपारायण, छन्दोऽनुशासन, द्वयाश्रय महाकाव्य, सप्तसन्धान महाकाव्य, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित, प्रमाणमीमांसा आदि हैं।

हेमचन्द्र के शिष्यों में रामचन्द्र और गुणचन्द्र प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् थे। रामचन्द्र के जीवन का अन्त दुःखमय था, क्योंकि ये अन्धे हो गये थे। जयसिंह सिद्धराज ने रामचन्द्र को 'कविकटारमल्ल' उपाधि से अलकृत किया था। रामचन्द्र-न्याय, व्याकरण और साहित्य में निष्णात थे। उन्होंने रघुविलास की प्रस्तावना में अपने को 'विद्यात्रयीचण' कहा है—

'पञ्चप्रबन्धमिषपञ्चमुखानकेन
विद्वन्मनःसदसि नृत्यति यस्य कीर्तिः।
विद्यात्रयीचणमचुम्बितकाव्यतन्द्र
कस्तं न वेद सुकृती किल रामचन्द्रम्॥

रामचन्द्र 'प्रबन्धशतकर्त्ता' के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनकी 39 कृतियों का पता चलता है, जिनमें नाट्यदर्पण, नलविलासनाटक, निर्भयभीमव्यायोग, सत्यहरिश्चन्द्र नाटक, कुमारविहारशतक, कौमुदीमित्राणन्द आदि प्रमुख हैं।[2]

रामचन्द्र और गुणचन्द्र ने नाट्यदर्पण की रचना की है। नाट्यदर्पण चार विवेकों में विभक्त है। इसमें कारिकाएँ हैं और उन पर ग्रन्थकारों की विवृति है। इसमें दशरूपकों के अतिरिक्त दो संङ्कीर्ण भेदों-नाटिका और प्रकरणी-का भी निरूपण हुआ है।

ग्रन्थकारों ने अनेक स्थलों पर दशरूपककार के मत का खण्डन किया है।

दशरूपककार के अनुसार नाटक का नायक धीरोदात्त होना चाहिए,[3], किन्तु नाट्यदर्पण के आचार्यों के अनुसार धीरललित भी नाटक का नायक हो सकता है।[4]

दशरूपककार अमात्य को धीरप्रशान्त नायक मानते हैं।[5] रामचन्द्र और गुणचन्द्र अमात्य को धीरोदात्त

---

2. नाट्यदर्पण (दिल्ली विश्वविद्यालय का संस्करण) की प्रस्तावना, पृ. 16

3. 'अभिगम्यगुणैर्युक्तो धीरोदात्तः प्रतापवान्।
कीर्तिकामो महोत्साहस्त्रय्यास्त्राता महीपतिः॥'
दशरूपक (चौ. सं.) 3/22–23

4. 'ये तु नाटकस्य नेतारं धीरोदात्तमेव प्रतिजानते, न ते मुनिनयाध्यवगाहिनः। नाटकेषु धीरललितादीनामपि नायकनां दर्शनात कविसमयबाह्याश्च। नाट्यदर्पण 1/7 की विवृति।

5. अथ प्रकरणे वृत्तमुत्पाद्यं लोकसंश्रयम्।
अमात्यविप्रवणिजामेकं कुर्याच्च नायकम्॥
धीरप्रशान्तं सापायं धर्मकामार्थतत्परम्। दशरूपक 3।39-40

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानते हैं।[6] वे दशरूपककार द्वारा दिये गये अमात्य के 'धीरप्रशान्त' विशेषण को ठीक नहीं मानते।

ग्रन्थकारों ने अनेक स्थलों पर धनञ्जय के मत का उल्लेख अन्ये, केचित् आदि के द्वारा किया है।

नाट्यदर्पणकारों ने मम्मट के भी मत का खण्डन किया है मम्मट ने अङ्ग-रस के अतिविस्तार को रस-दोष माना है और हयग्रीववध के हयग्रीव-वर्णन को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।[7] नाट्यदर्पण के आचार्यों की मान्यता है कि यह वृत्त (कथा) का दोष है, रस का दोष नहीं।[8]

रामचन्द्र और गुणचन्द्र के मौलिक विचार अनेक स्थानों पर उपलब्ध होते हैं। उनका परीक्षण और मूल्याङ्कन स्वतन्त्र निबन्ध का विषय हैं।

जैन-आचार्य वाग्भट (प्रथम) जयसिंह सिद्धराज के मन्त्री थे। इनका प्राकृत-नाम बाहड था और इनके पिता का नाम सोम था—

बम्भण्डसुत्तिसम्पुडमुक्तिअमणिणो पहासमूहव्व।
सिरि बाहड त्ति तणओ आसि बुहो तस्स सोमस्स ॥[9]

प्रभाचन्द्राचार्य के प्रभावकचरित से ज्ञात होता है कि वाग्भट ने अपने धन से जैन-मन्दिर का निर्माण कराया था, जिसमें श्रीमहावीर की प्रतिष्ठा संवत् 1179 में की गयी थी—

अथास्ति बाहडो नाम धनवान् धार्मिकाग्रणीः।
गुरूपादान् प्रणम्याथ चक्रे विज्ञापनामसौ॥
आदिश्यतामतिश्लाघ्यं कृत्यं यत्र धनं व्यये।
प्रभुराहालये जैने द्रव्यस्य सफलो व्ययः॥
शतैकादशके साष्टसप्ततौ विक्रमार्कतः।
वत्सराणां व्यतिक्रान्ते श्रीमुनिचन्द्रसूरयः॥
आराधनाविधिश्रेष्ठं कृत्वा प्रायोपवेशनम्।
शमपीयूषकल्लोलप्लुतास्ते त्रिदिवं ययुः।
वत्सरे तत्र चैकेन पूर्णे श्रीदेवसूरिभिः।
श्रीवीरस्य प्रतिष्ठां स बाहडोऽकारयन्मुदा॥

वाग्भट का निवासस्थान अणहिल्लपट्टन बतलाया जाता है। वाग्भटालङ्कार के अधोलिखित श्लोक से वाग्भट की जैन-धर्म के प्रति श्रद्धा और आस्था प्रकट होती है—

श्रियं दिशतु वो देवः श्रीनाभेयजिनः सदा।
मोक्षमार्गं सतां ब्रूते यदागमपदावली॥'[10]

---

6. 'सचिवो राज्यचिन्तकः। अयं वणिग्विप्रयोर्मध्यपात्यपि धीरोदात्त—धीरप्रशान्तौ प्रकरणे नेतारौ भवत इति प्रतिपादनार्थं पृथगुपात्तः। यस्त्वमात्य नेतारम्युपगम्य धीरप्रशान्तनायकमिति 'प्रतरणं' विशेषयति, स वृद्धसम्प्रदायवन्ध्यः।' नाट्यदर्पण 2।1 की विवृति।

7. काव्यप्रकाश (झलकीकर की टीका से समन्वित, 1950 ई.), पृ. 441।

8. 'केचिदत्र हयग्रीववधे हयग्रीववर्णनमुदाहरन्ति।स पुनर्वृत्तदोषो वृत्तनायकस्याल्पवर्णनात्। तत्र हि वीरो रसः। स विशेषतो वध्यस्य शौर्यविभूत्यतिशयवर्णनेन भूष्यत इति। नाट्यदर्पण 3।23 की विवृति।

9. वाग्भटालङ्कार (चौ. सं.), 4।147

10. वही 1।1। इस पर देखिए—सिंहदेवगणि की टीका, जिसमें उन्होंने अतिशयचतुष्टय तथा रत्नत्रय का निर्देश किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाग्भट ने वाग्भटालङ्कार की रचना की है। इसमें पाँच परिच्छेद हैं। इसमें काव्यफल, काव्योत्पत्ति, काव्यशरीर, दोष, गुण, अलङ्कार और रस के विषय में संक्षेप में विचार किया गया है। प्रथम परिच्छेद में 26 श्लोक, द्वितीय में 29 श्लोक, तृतीय में 181 श्लोक, चतुर्थ में 152 श्लोक, और पञ्चम में 33 श्लोक हैं।

नरेन्द्रप्रभसूरि ने मन्त्रीश्वर वस्तुपाल की प्रेरणा से अलङ्कारमहोदधि की रचना 1225-26 ई. में की।[11] राजशेखरसूरि ने न्यायकन्दलीपञ्जिकाप्रशस्ति में नरेन्द्रप्रभसूरि को अलङ्कारमहोदधि का कर्त्ता बतलाया है—

तस्य गुरोः प्रियशिष्यः प्रभुर्नरेन्द्रप्रभः प्रभानाट्यः।
योऽलङ्कारमहोदधिमकरोत् काकुत्स्थकेलिं च ॥[12]

नरचन्द्रसूरि नरेन्द्रप्रभसूरि के गुरू थे। नरेन्द्रप्रभसूरि ने गुरू की आज्ञा पर श्रीवस्तुपाल की प्रसन्नता के लिए अलङ्कारमहोदधि का निर्माण किया—

तन्मे मातिसविस्तरं कविकलासर्वस्वगर्वोद्धुरं।
शास्त्रं ब्रूत किमप्यनन्यसदृशं बोधाय दुर्मेधसाम्।
इत्यभ्यर्थनया प्रतीतमनसः श्रीवस्तुपालस्य ते।
श्रीमन्तो नरचन्द्रसूरिगुरवः साहित्यतत्त्वं जगुः ॥
तेषां निदेशादथ सद्गुरुणां श्रीवस्तुपालस्य मुदे तदेतत्।
चकार लिप्यक्षरसंनिविष्टं सूरिर्नरेन्द्रप्रभनामधेयः ॥
काव्यालङ्कारसूत्राणि स्वानि किञ्चिद् विवृण्महे।
तन्मनस्तन्मयीकृत्य विभाव्यं कोविदोत्तमैः ॥[13]

अलङ्कारमहोदधि आठ तरङ्गों में विभक्त है। प्रथम में काव्यप्रयोजन आदि, द्वितीय में शब्द-वैचित्र्य, तृतीय में ध्वनिनिर्णय, चतुर्थ में गुणीभूतव्यङ्ग्य, पञ्चम में दोष, षष्ठ में गुण, सप्तम में शब्दालङ्कार और अष्टम में अर्थालङ्कार का निरूपण हुआ है।

अजितसेन ने अलङ्कारचिन्तामणि और शृङ्गारमञ्जरी की रचना की शृङ्गारमञ्जरी छोटी रचना है। अजितसेन ने शृङ्गारमञ्जरी की रचना 1245 ई. के लगभग और अलङ्कारचिन्तामणि की रचना 1250-1260 ई. में की।[14] अलङ्कारचिन्तामणि का प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ से 1973 ई. में हुआ है। डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ने विस्तृत भूमिका और अनुवाद के साथ इस ग्रन्थ का सम्पादन किया है। इसमें पाँच परिच्छेद हैं। प्रथम (106 श्लोक) का नाम कविशिक्षाप्ररूपण, द्वितीय (189½ श्लोक) का नाम चित्रालङ्कारप्ररूपण, तृतीय (41 श्लोक) का नाम यमकादिवचन, चतुर्थ (345 श्लोक) का नाम अर्थालङ्कारविवरण तथा पञ्चम (406 श्लोक) का नाम रसादिनिरूपण है।

अरिसिंह तथा अमरचन्द्र की कृति काव्यकल्पलता के नाम से प्रसिद्ध है। अरिसिंह ने इसके सूत्रों की रचना

---

11. अलङ्कारमहोदधि (ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा सं. 1942 ई.) के अन्तिम श्लोक में ग्रन्थ का रचनाकाल संवत् 1282 दिया गया है—
'नयनवसुसूरि (1282) वर्षे निष्पन्नायाः प्रमाणमेतस्याः।
अजनि समस्रचतुष्टयमनुष्टुभामुपरि पञ्चशती ॥'
इस श्लोक से ग्रन्थ का प्रमाण 4500 श्लोक ज्ञात होता है।
12. वही, प्रस्तावना, पृ. 16।
13. वही, 1।18.20
14. अलङ्कारचिन्तामणि की प्रस्तावना, पृ. 33-34।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की है और अमरचन्द्र ने वृत्ति। अमरचन्द्र ने अलङ्कारप्रबोध की भी रचना की।[15] अरिसिंह और अमरचन्द्र का समय त्रयोदश शताब्दी है।

वाग्भट (द्वितीय) नामक एक अन्य जैन-आचार्य हुए हैं। ये वाग्भटालङ्कार के कर्त्ता वाग्भट से भिन्न हैं। इनका समय सम्भवतः चतुर्दश शताब्दी है। इनके पिता का नाम नेमिकुमार था[16] और का माता नाम वसुन्धरा। ये राधापुर में रहते थे। इन्होंने काव्यानुशासन की रचना की।[17] काव्यानुशासन वाग्भट की अलङ्कारतिलक टीका के साथ निर्णयसागर से प्रकाशित हो चुका है।

इसके सूत्र गद्य में हैं। यह ग्रन्थ पाँच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम में काव्यप्रयोजन, काव्यहेतु, द्वितीय में दोष-गुण, तृतीय में अर्थालङ्कार, चतुर्थ में शब्दालङ्कार तथा पञ्चम में रस, नायक-नायिकाओं के प्रकार और रस-दोषों का विवेचन हुआ है। वाग्भट ने अपनी टीका में विभिन्न प्रदेशों, नदियों, वृक्षों और अनेक विशिष्ट वस्तुओं का स्थल-स्थल पर उल्लेख किया है। इन्होंने छन्दोऽनुशासन तथा ऋषभदेवचरित की भी रचना की थी।[18]

भावदेवसूरि ने काव्यालङ्कारसार नामक लघुकाय ग्रन्थ की रचना की। यह नरेन्द्रप्रभसूरि-विरचित अलङ्कारमहोदधि के परिशिष्ट के रूप में प्रकाशित हुआ है। इसमें आठ अध्याय हैं। प्रथम में काव्यफलहेतु, द्वितीय में शब्दार्थ, तृतीय में शब्दार्थदोष, चतुर्थ में गुण, पञ्चम में शब्दालङ्कार, षष्ठ में अर्थालङ्कार, सप्तम में रीति और अष्टम में रस का निरूपण हुआ है। इसकी श्लोक-सख्या 132 है। आठ अध्यायों में क्रमशः 5, 15, 24, 13, 13, 49, 5 और 8 श्लोक हैं।

मन्त्रिमण्डन श्रीमाल वंश में उत्पन्न हुए थे। इनका समय विक्रमीय पन्द्रहवीं शताब्दी है। इन्होंने अलङ्कारमण्डन नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें पाँच परिच्छेद हैं। काव्यमण्डन-चम्पूमण्डन-शृङ्गारमण्डन-सङ्गीतमन्डन-सारस्वतमण्डन-कादम्बरीमण्डन-चन्द्रविजय आदि भी इनकी रचनाएँ बतलायी जाती हैं।[19]

अणुरत्नमण्डन या रत्नमण्डनगणि (15 वीं शताब्दी) ने कविशिक्षाविषयक ग्रन्थ 'जल्पकल्पलता' की रचना की। इनकी अन्य कृति मुग्धमेधाकर है, जिसमें मुख्य रूप से अलङ्कारों का विवेचन किया गया है।[20]

जयमङ्गलाचार्य-कृत कविशिक्षा और आचार्य विनयचन्द्र-कृत कविशिक्षा में कवियों के लिए आवश्यक निर्देशों का प्रतिपादन हुआ है।[21]

---

15. अलङ्कारमहोदाधि की प्रस्तावना; पृ. 20।

16, 17. 'नव्यानेकमहाप्रबन्धरचनाचातुर्यविस्फूर्जित—
स्फारोदारयशः प्रचारसततव्याकीर्णबिश्वत्रयः।
श्रीमन्नेमिकुमारसूनुरखिलप्रज्ञालुचूडामणिः
काव्यानामनुशासनं वरमिदं चक्रे कविर्वाग्भटः॥
काव्यानुशासन (निर्णयसागर सं., 1915 ई0) का अन्तिम श्लोक।

18. कृष्णमाचार्य, हिस्ट्री ऑफ क्लैसिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ. 764।

19. अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना।

20. कृष्णमाचार्य, हिस्ट्री ऑफ क्लैसिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ 780।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन-टीकाकार

अनेक जैन-आचार्यों ने काव्यशास्त्र के उत्कृष्ट ग्रन्थों पर टीकाओं की रचना की है।

वादिसिंह ने दण्डी के काव्यादर्श की टीका की।[22]

रुद्रट के काव्यालङ्कार के कई जैन-टीकाकार हुए हैं। नमिसाधु काव्यालङ्कार के प्रसिद्ध टीकाकार हैं। इनके गुरू शीलभद्र थे। इन्होंने अपनी टीका की रचना 1069 ई. में की—

एवं रुद्रटकाव्यालंकृतिटिप्पणकविरचनात् पुण्यम्।
यदवापि मया तस्मान्मनः परोपकृतिरति भूयात् ॥
थारापद्रपुरीयगच्छतिलकः पाण्डित्यसीमाभवत्—
सूरिर्भूरिगुणैकमन्दिरमिह श्रीशालिभद्राभिधः।
तत्पादाम्बुजषट्पदेन नमिना सङ्क्षेपसम्प्रेक्षिणः
पुंसो मुग्धधियोऽधिकृत्य रचितं सट्टिप्पणं लहवदः ॥
पञ्चविंशतिसंयुक्तैरेकादशसमाशतैः।
विक्रमात् समतिक्रान्तैः प्रावृषीदं समर्थितम् ॥[23]

काव्यालङ्कार के अन्य जैन-टीकाकार आशाधर हैं। इन्होंने अपने पिता का नाम सल्लक्षण और पुत्र का नाम छाहड बतलाया है। इन्होंने टीका की रचना 1239-43 ई. में की। इनकी अन्य रचनाएँ हैं—अमरकोश की टीका, वाग्भट-कृत अष्टाङ्गहृदय की टीका, त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र, रत्नत्रयविधानशास्त्र आदि।[24]

काव्यप्रकाश की सबसे प्राचीन टीका माणिक्यचन्द्र-कृत सङ्केत है। माणिक्यचन्द्र सागरेन्दु के शिष्य थे। इन्होंने टीका की रचना 1159 ई. में की।[25] माणिक्यचन्द्र गुर्जरदेश के निवासी थे। इनकी टीका में किसी टीका या टीकाकार के नाम का उल्लेख नहीं मिलता। अभिधावृत्तिमातृकाकार मुकुल और सरस्वतीकण्ठाभरणकार भोजराज का उल्लेख मिलता है।[26]

गुणरत्नगणि ने काव्यप्रकाश की सारदीपिका नामक टीका की रचना की तथा भानुचन्द्र-सिद्धचन्द्र ने काव्यप्रकाशविवृति का प्रणयन किया।[27]

21., 22. अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना।

23. काव्यालंकार की नमिसाधु-कृत टीका के अन्तिम श्लोक।

24. काणे, संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास (मोतीलाल सं., 1966 ई.), पृ. 197-98 और अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना।

25. गुणानपेक्षिणी यस्मिन्नर्थालङ्कारतत्परा।
प्रौढापि जायते बुद्धिः सङ्केतः सोऽयमद्भुतः ॥1॥
मदमदनतुषारक्षेपपूषाबिभूषा जिनवदनसरोजावासिवागीश्वरीया।
द्युमुखमरिवलतर्कग्रन्थपङ्केरुहाणां तदनु समजनि श्रीसागरेन्दुर्मुनीन्द्रः ॥10॥
माणिक्यचन्द्राचार्येण तदङ्घ्रिकमलालिना।
काव्यप्रकाशसङ्केतः स्वान्योपकृतये कृतः ॥11॥
रसवक्त्रग्रहाधीशवत्सरे (संवत् 1216) मासि माधवे।
काव्ये काव्यप्रकाशस्य सङ्केतोऽयं समर्थितः ॥12॥
काव्यप्रकाश (झलकीकर की टीका) की प्रस्तावना के पृ. 21-22 पर सङ्केत के श्लोक उद्धृत।

26. वही, पृ. 21।

27. अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक जैनों ने वाग्भटालङ्कार की टीका की। सिंहदेवगणि की टीका चौखम्बा विद्याभवन से प्रकाशित (1957 ई.) हुई है। इन्होंने मुग्धजनों के प्रबोध और अपनी स्मृति की वृद्धि के लिए टीका की रचना की—

वाग्भटकवीन्द्ररचितालंकृतिसूत्राणि किमपि विवृणोमि।
मुग्धजनबोधहेतोः स्वस्य स्मृतिजननवृद्ध्यै च ॥,[28]

वाग्भटालङ्कार के अन्य जैन-टीकाकार हैं—जिनवर्धनसूरि, क्षेमहंसगणि, ज्ञानप्रमोदगणि, वादिराज, राजहंसोपाध्याय, समयसुन्दर आदि।[29]

आजड ने सरस्वतीकण्ठाभरण तथा जिनप्रभ, शिवचन्द्र, विनयरत्न, विद्यासागर आदि ने धर्मदास-कृत विदग्धमुखमण्डन की टीका की।

□ □

28. काव्यालङ्कार की टीका के प्रारम्भ में द्वितीय श्लोक।
29. अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना, पृ. 19 तथा कृष्णमाचार्य-कृत हिस्ट्री ऑफ क्लैसिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ. 762-63।
30. अलङ्कारमहोदधि की प्रस्तावना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org